चतुर्थ पट्टाचार्यश्री 108 सुनीलसागरजी महाराज के सान्निध्य में गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद में आयोजित राष्ट्रीय विद्वत्संगोष्ठी 18-19 अक्टूबर 2025

प्राकृत साहित्य के विविध आयाम

- डॉ. आशीष जैन आचार्य शाहगढ़ सागर
(राष्ट्रपति सम्मानित)
महामंत्री – प्राकृत भाषा विकास फाउण्डेशन
संयुक्त मंत्री – अखिल भारतवर्षीय दि. जैन शास्त्रिपरिषद्

प्राकृत साहित्य भारतीय परम्परा की अमूल्य धरोहर है। प्राकृत भाषाओं में लिखा गया गद्य और पद्यात्मक साहित्य सम्मिलित है। इस साहित्य के अनेक आयाम हैं, जिनमें धार्मिक, दार्शनिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, और सांस्कृतिक दृष्टिकोण सम्मिलित हैं।

प्राकृत साहित्य प्राकृत भाषाओं में रचित है जो संस्कृत की तुलना में सरल और लोकभाषा-आधारित है। इनमें सबसे प्राचीन शौरसेनी और अर्धमागधी प्राकृत हैं, जो जैन धार्मिक ग्रंथों का आधार है। जैन आगम या जैनश्रुतांग इसके प्रमुख उदाहरण हैं। प्राकृत भाषाएँ भारत की विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों का समष्टिगत रूप हैं, जिनका उपयोग धार्मिक, काव्यात्मक और कथात्मक साहित्य में हुआ है। यह साहित्य भाषा के विकास और भारतीय संस्कृति में लोकजीवन के पक्ष का मूल्यवान स्रोत है।

प्राकृत साहित्य विभिन्न प्राकृत बोलियों में विभाजित है – अर्धमागधी, शौरसेनी, महाराष्ट्री, चूलिका पैशाची, पैशाची, मागधी, पालि एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाएं । इन भाषाओं में धार्मिक और सांसारिक विषयों पर ग्रंथ रचे गए। शौरसेनी प्राकृत का उपयोग जैन ग्रन्थों के अलावा संस्कृत नाटकों में स्त्री पात्रों तथा आम जनता की भाषा के रूप में भी हुआ। शौरसेनी प्राकृत को सबसे शुद्ध प्राकृत माना गया है। प्राकृत साहित्य सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक जीवन का सजीव दर्पण है, जिसमें तत्कालीन लोकजीवन, नीतिशास्त्र और इतिहास के तत्व समाहित हैं।

यह साहित्य भाषा, संस्कृति और इतिहास के अध्ययन हेतु अनमोल है। यह भारतीय समाज की लोकभाषाओं के विकास, धार्मिक विचारों और सामाजिक परंपराओं को समझने का माध्यम है। इसके माध्यम से वैदिक संस्कृत से अलग भाषा विकास के पहलू स्पष्ट होते हैं तथा जैन और बौद्ध धर्म की शिक्षाएं विस्तृत रूप में मिलती हैं। प्राकृत साहित्य आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्गम का भी स्रोत माना जाता है।

प्राकृत शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ – प्राकृत शब्द प्रकृति से बना है। प्रकृति की व्युत्पत्ति है – प्र+कृ+ क्तिन् अर्थात् प्र उपसर्ग पूर्वक कृ धातु से क्तिन् प्रत्यय होने से प्रकृति बना है। प्रकृतेः आगतम् इस व्युत्पत्ति के आधार पर प्राकृत बना है। जिसका अर्थ प्रकृति से उत्पन्न, नैसर्गिक, स्वभाव। प्रक्रियते यया सः प्रकृतिः अर्थात् जिससे दूसरे पदार्थों की उत्पत्ति हो।

प्राकृत भाषा की उत्पत्ति और विकास – प्राकृत भाषा की उत्पत्ति जनसामन्य के बोलचाल से ही हुई है। जनसामान्य में जो बोला, कालान्तर में उसे भाषा के रूप में ग्रहण कर लिया गया और वही प्राकृत है। प्राकृत भाषा के रूप में विकसित हुई, न कि भाषा से बोली बनी है। बोली से भाषा बनी है।

भारतीय संस्कृति में वेदों का बहुत महत्व है। वेदों की प्रामणिकता एवं काल के संदर्भ में अनेक विद्वानों के अभिमतों में ऊहापोह है। फिर भी, वेदों की रचना कब हुई? किसने की? क्यों की? यह प्रसंग नहीं है। यहाँ प्रसंग भाषा का है। इसलिए उसके ही संदर्भ में कह रहे हैं। वेदों की भाषा छान्दस् है। छान्दस् न तो संस्कृत है और न ही प्राकृत है। वेदों में प्रयुक्त शब्द इस बात के द्योतक है कि जनसामान्य की भाषा का वहाँ भी ध्यान रखा गया है। प्राकृत भाषा के लिए छान्दस् और छान्दस् के लिए प्राकृत एवं दोनों के लिए भाषा विकास का सीधा संबंध है। इसलिए प्राकृत की उत्पत्ति का कोई मूल नहीं है। फिर भी इसकी उत्पत्ति के संदर्भ में अनेक मत हैं, जिन्हें यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं –

प्राकृत को बहता नीर और संस्कृत को बद्ध महासरोवर कहा है। प्राकृत और संस्कृत दोनों में छान्दस् के तत्त्व विद्यमान है। छान्दस् स्त्रोत से प्रवाहित होने पर एक वृद्धा कुमारी बनी रही और दूसरी कुमारी युवती। तात्पर्य यह है कि संस्कृत पुरानी होती हुई भी सदा मौलिक रूप धारण करती है, इसके विपरीत प्राकृत चिर युवती है, जिसकी संतानें निरंतर विकसित होती जा रही है। संस्कृत को कूपजल और प्राकृत को बहता नीर कहा गया है।

संस्कृत से प्राकृत भाषा की उत्पत्ति हुई हैं इसके पक्ष में मत – आचार्य हेमचन्द्र, मार्कण्डेय, धनिक सिंहदेव गणी आदि प्राकृत की प्रकृति संस्कृत को मानते हैं। जिनके संदर्भ निम्न हैं –

प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम्। संस्कृतान्तरं प्राकृतमधिक्रियते। संस्कृतानन्तरं च प्राकृतस्यानुशासनं। सिद्धसाध्यमानभेदसंस्कृतयोरेव तस्य लक्षणं न देश्यस्य इति ज्ञापनार्थम्।[i]

अर्थात् प्रकृति संस्कृत है, इस संस्कृत से आयी हुई भाषा प्राकृत है। संस्कृत के पश्चात् प्राकृत का अधिकार आरंभ होता है। प्राकृत में जो शब्द संस्कृत के मिश्रित है, उनको संस्कृत के समान ही

अवगत करना चाहिये। तद्भव शब्द दो प्रकार के है - साध्यमान संस्कृतभव और सिद्ध संस्कृतभव। अनुशासन इन दोनों प्रकार के शब्दों का ही प्रतिपादित है। देश्य शब्दों का नहीं।

पुनश्च -

प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं प्राकृतमुच्यते।[ii]

प्रकृति संस्कृत है। उससे जो उत्पन्न है वह प्राकृत है।

आगे कहते हैं -

प्रकृतेः आगतं प्राकृतम्। प्रकृतिः संस्कृतम्।[iii]

प्रकृति से आई हुई प्राकृत है और प्रकृति संस्कृत है।

प्राकृतस्य तु सर्वमेव संस्कृतं योनिः।[iv]

प्राकृत की योनि अर्थात् उत्पत्तिस्थान संस्कृत है।

प्रकृतेः संस्कृतायास्तु विकृतिः प्राकृती मता।[v]

प्रकृति से संस्कृत और संस्कृत की विकृति से प्राकृत की उत्पत्ति हुई है।

प्रकृतेः संस्कृताद् आगतं प्राकृतम्।[vi]

प्रकृति से संस्कृत और संस्कृत से प्राकृत आई है।

४) प्राकृत शब्द प्रदीपका के रचयिता - नरसिंह

५) गीतगोविंद की रसिक सर्वस्व टीका के लेखक - नारायण

प्रक्रियते यया सः प्रकृतिः अर्थात् जिससे दूसरे पदार्थों की उत्पत्ति हो मूलतत्त्व, व्युत्पत्ति के आधार पर प्राकृत के लिये संस्कृत को ही मूल उत्पादक कहा है।[vii]

प्राकृत भाषा की उत्पत्ति स्वतंत्र है और संस्कृत की उत्पत्ति भी प्राकृत भाषा से हुई है - के पक्ष में मत -

प्राकृतसंस्कृतमागधपिशाचभाषाश्च शौरसेनी च।

षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषादपभ्रंशः।। काव्यालंकार२/१२

प्राकृतेति सकलजगज्जंतूनां व्याकरणादिभिरनाहितसंस्कारः सहजो वचन व्यापारः प्रकृतिः, तत्र भवं सैव वा प्राकृतम्। आरिसवयवो सिद्धं देवाणं अद्धमागहा वाणी इत्यादिवचनात् वा प्राक् पूर्वं कृतं प्राकृतं बालमहिलादिसुबोधं सकलभाषनिबंधभूतं वचनमुच्यते। मेघनिर्मुक्तजलमिवैकस्वरूपं तदेव च देशविशेषात् संस्कारकरणाच्च समासादितविशेषं सत् संस्कृताघुत्तरविभेदानाप्नोति। अत एव शास्त्रकृता प्राकृतमादौ निर्दिष्ट तदनु संस्कृतादीनि। पाणिन्यादिव्य करणोदितशब्दलक्षणेन संस्करणात् संस्कृतमुच्यते।[viii]

रुद्रटकृत काव्यालंकार के श्लोक की व्याख्या करते हुये ग्यारवीं शताब्दी के नमिसाधु ने कहा है – प्रकृत शब्द का अर्थ है लोगों का व्याकरण आदि के संस्कारों से रहित स्वाभाविक वचन व्यापार, उससे उत्पन्न अथवा वही प्राकृत है। प्राक् कृत पद से प्राकृत शब्द बना है और प्राक् कृत का अर्थ है – पहले किया गया। द्वादशांग ग्रन्थों में ग्यारह अंग ग्रन्थ पहले किए गए हैं और इन ग्यारह अंग ग्रन्थों की भाषा आर्ष वचन में – सूत्र में अर्धमागधी कही गयी है, जो बालक, महिला आदि को सुबोध–सहज गम्य है और जो सकल भाषाओं का मूल है यह अर्धमागधी भाषा ही प्राकृत है। यही प्राकृत मेघयुक्त जल की तरह पहले एक रूपवाली होने पर भी देशभेद से और संस्कार करने से भिन्नता को प्राप्त करती हुई संस्कत आदि अवान्तर विभेदों में परिणत हुई हैं अर्थात् अर्धमागधी प्राकृत से संस्कृत और अन्यान्य प्राकृत भाषाओं की उत्पत्ति हुई है। इसी कारण से मूल ग्रन्थकार रुद्रट ने प्राकृत को पहले और संस्कृत आदि का बाद में निर्देश किया है। पाणिन्यादि व्याकरणों में बताए हुए नियमों के अनुसार संस्कार पाने के कारण संस्कृत कहलाती है।[ix] इसी कारण मूलग्रन्थकार ने पहले प्राकृत को रखा पश्चात् संस्कृतादि को।

आगे कहते हैं –

सयलाओ इमं वाया विसंति एत्तो य णेंति वायाओ।
एंति समुद्दं चिय णेंति सायराओ च्चिय जलाइं।।[x]

जिस प्रकार जल समुद्र में प्रवेश करता है और समुद्र से ही वाष्प रूप में बाहर निकलता है, इसी तरह प्राकृत भाषा में सब भाषायें प्रवेश करती है और इस प्राकृत भाषा से ही सब भाषायें निकलती है। तात्पर्य यह है कि प्राकृत भाषा की उत्पत्ति अन्य किसी भाषा से नहीं हुई है किन्तु संस्कृत आदि सभी भाषायें प्राकृत से ही है।

आगे कहते हैं –

याद्योनिः किल संस्कृतस्य सुदशां जिह्वासु यन्मोदते।[xi]

प्राकृत को संस्कृत की योनि-विकास स्थान कहा है।

डॉ. पिशल ने भी मूल प्राकृत को जनता की भाषा कहा है। इसकी जड़े जनता की बोलियों के भीतर है।[xii]

स्व अभिमत – दोनों प्रकार के प्रमाण उपलब्ध हैं। प्राकृत से संस्कृत और संस्कृत से प्राकृत की उत्पत्ति हुई है। यदि हम यहाँ विचार करें कि जिस प्रकार से अनेक विद्वानों से यह कहा है कि प्रकृति संस्कृत है। यह बात किसी भी दृष्टिकोण से अनुकूल नहीं समझ पड़ रही है। पहली बात तो यह है कि प्रकृति की व्युत्पत्ति और अर्थ मूल भाव, समायोजन, शब्दसाम्यता आदि कहीं भी संस्कृत से मेल नहीं खाती है। दूसरी बात यह है कि संस्कृति प्रकृति से कैसे हो सकती है? क्योंकि संस्कृत बद्ध है। उसे नियमों-सूत्रों में इतनी तारतम्यता के साथ बांधा गया है जैसे किसी माला की डोर टूटने पर उसके सारे मोती विखर जायेंगे, वैसे ही संस्कृत में भी है। तीसरी बात है कि संस्कृत भाषा में सहजता और सरलता नहीं है, जो कि एक बोली के लिए आवश्यक है। बद्ध होने के कारण सम्पूर्ण नियमावली का ध्यान में रखकर ही वाक्यों का निर्माण होता है और वाक्य विन्यास में किसी भी प्रकार की अशुद्धि होने पर अर्थ में परिवर्तन की संभावना अधिक प्रकट होती है। ऐसी अवस्था में, भाषा को बोली के रूप में होने से सहजता और सरलता में कठिनाई प्रतीत होता है। जैसे एक उदाहरण से समझते हैं – प्राकृत भाषा में निबद्ध प्रवचनसार ग्रन्थ में एक उक्ति है – सहावेण मायायारेण इत्थीणं। इसका संस्कृत अनुवाद है – स्वभावेन मायाचारेण स्त्रीणाम्। अर्थात् दोनों का अर्थ है कि ित्रयों में मायाचारी स्वभाव से होती है। संस्कृत का तो एक ही अर्थ यहाँ प्रकट रूप में है क्योंकि माया का अर्थ मायाचारी और छलकपट ही है। ऐसे में, भरी सभा में ऐसा कहने से ित्रयों के प्रति उपेक्षा का भाव होगा। प्राकृत भाषा का विद्वान् कहेगा – ित्रयों में माता का आचारण भी स्वभाव से होता है क्योंकि माया शब्द का अर्थ में प्राकृत में माता भी है। इसलिए यहाँ बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि प्रकृति प्राकृत का जुड़ाव स्पष्ट है।

इस प्रकार अनेक प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से नहीं है। छान्दस् का विकास जिस प्रथम स्तर की प्रादेशिक भाषा से होता है उसी से प्राकृत भी विकसित है। इसका विकास ऋग्वेद की अपेक्षा अथर्ववेद और ब्राह्मण ग्रन्थों की भाषा से मानना तर्कसंगत है।

[i] सिद्धहैमशब्दानुशासन८/१/१- अथ प्राकृतम्।
[ii] प्राकृतसर्वस्य-मार्कण्डेय
[iii] दशरूपक के टीकाकार धनिक २/६०
[iv] कर्पूरमंजरी के टीकाकार - वासुदेव
[v] षड्भाषाचन्द्रिका के रचयिता -लक्ष्मीधर
[vi] वाग्भट्टालंकार के टीकाकार - सिंहदेवगणी
[vii] शकुन्तला के टीकाकार - शंकर
[viii] टीका नमिसाधु कृत
[ix] प्राकृत-भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास/पृष्ठ 14, प्राकृत साहित्य का इतिहास/पृष्ठ 9
[x] आठवीं शताब्दी के विद्वान् वाक्पतिराज गउडवहो
[xi] नवमीं शताब्दी के विद्वान् कवि राजशेखर बालरामयण
[xii] डॉ. पिशल द्वारा